लुई पासचर

रे बेंस, चित्र : डिक, हिंदी : विदूषक

लुई पासचर

रे बेंस, चित्र : डिक, हिंदी : विदूषक
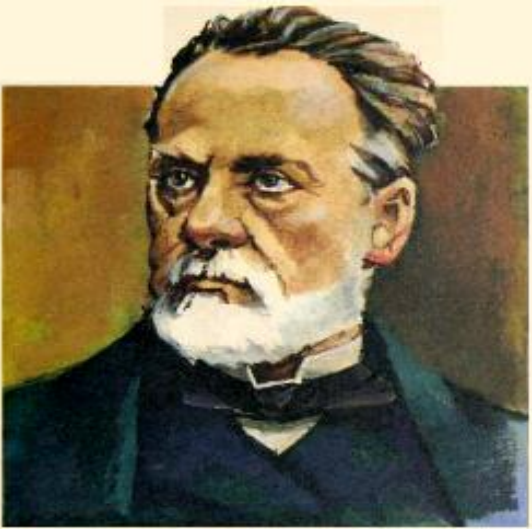
सैकड़ों सालों से लोगों को सूक्ष्मजीवों - जीवाणुओं (माइक्रोब्स) के बारे में पता था. पर उन्नीसवीं शताब्दी के प्रसिद्ध वैज्ञानिक लुई पासचर ने पहली बार, इंसानों पर जीवाणुओं के असर के बारे में पता लगाया. लुई पासचर ने जीवाणुओं से पैदा हुई कुछ घातक बीमारियों को पहचाना. अपने शोध और खोजों से पासचर ने पहली बार विज्ञान की एक नई शाखा की शुरुआत की – जिसका नाम था माइक्रोबायोलॉजी.

लुई पासचर का जन्म 27 दिसम्बर 1822 को, फ्रांस के शहर डोले में हुआ. उनके पिता जीन-जोसफ पासचर, भेड़ और जानवरों की खालों से सुन्दर चमड़ा बनाने का काम करते थे. लुई के जन्म के तुरंत बाद उनका परिवार पास के शहर अर्बोईस में जाकर बस गया. यह शहर कुईसांस नदी के तट पर बसा था.

छह साल की उम्र में लुई ने स्थानीय स्कूल में जाना शुरू किया. वो एक बहुत मेहनती और गंभीर छात्र था. पर उसके शिक्षक उसे किसी भी रूप में विशेष नहीं मानते थे. असल में कुछ टीचर लुई को, मंद बुद्धि का छात्र मानते थे.

यह बात सच थी कि लुई अपना काम बहुत धीमी गति से करता था. पर उसके काम में कोई गलती नहीं होती थी. उसका काम एकदम "आदर्श" होता है. उसका लिखा हरेक अक्षर और अंक सुन्दर और साफ़ होता था.
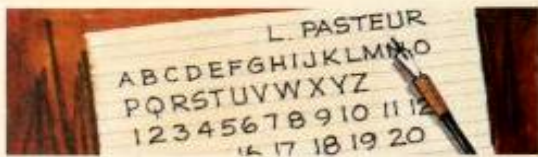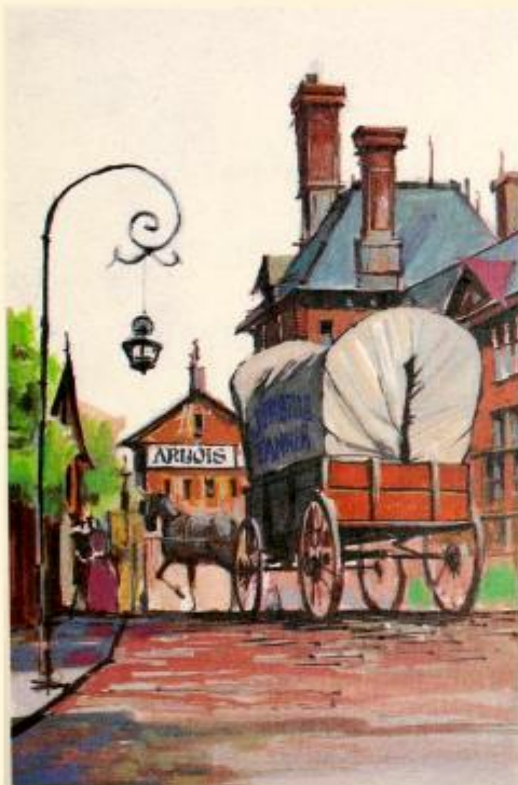
जल्द ही लुई ने चित्रकारी में अपनी प्रतिभा दिखाई. लुई हरेक चीज़ को बहुत ध्यान से देखता, उनका अध्धयन करता और उनके बारे में पूरी जानकारी हासिल करता था. फिर वो उस पूरी जानकारी को कागज़ पर उतारता था. उदहारण के लिए लुई किसी तितली का चित्र बनाने से पहले उसे उड़ते हुए, पंख मोड़ते हुए और फूलों से रस चूसते हुए देखता. फिर अंत में जब वो तितली का चित्र बनाता तो उसका हरेक विवरण, असली तितली से बिल्कुल मेल खाता.

स्कूल के छात्र काल में ध्यान से अध्धयन करने की कुशलता ने बाद में पासचर की ज़िन्दगी में एक बहुत महत्वपूर्ण रोल निभाया. बड़े होने के बाद पासचर ने इस कुशलता का बखूबी इस्तेमाल किया. वो छोटी चीज़ों को अपने सूक्ष्मदर्शी (माइक्रोस्कोप) से देखता फिर उनकी बारीकियों का कागज़ पर उम्दा चित्र बनाता था. इसीलिए वैज्ञानिक, आज भी पासचर द्वारा बनाये खमीर, फफूंद और अन्य छोटे जीवाणुओं के चित्रों को आसानी से पहचान पाते हैं.
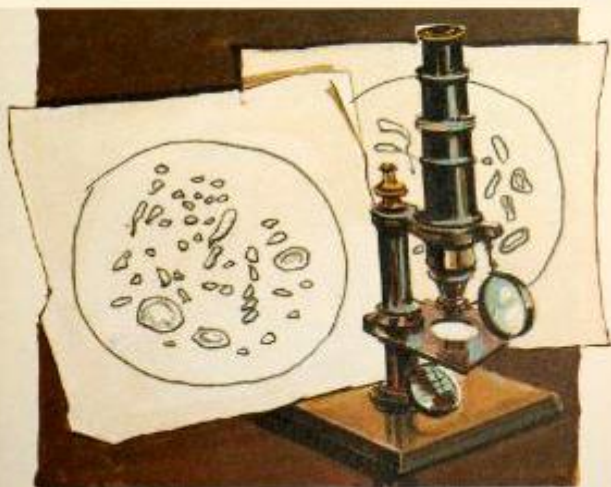
तेरह साल की उम्र में लुई पासचर ने अर्बोईस हाई स्कूल में जाना शुरू किया. वो एक चिंतनशील छात्र था, जो हर काम को सोच-समझ कर धीरे-धीरे करता था, पर वो मंदबुद्धि नहीं था. शुरू की कक्षायों में वो अपने क्लास में अव्वल नंबर पर आता था. स्कूल के प्रिंसिपल ने सुझाव दिया कि लुई पासचर को यूनिवर्सिटी में दाखिला लेना चाहिए. शायद एक दिन वो वहां शिक्षक बने. शिक्षक बनने के विचार मात्र से ही लुई और उसका माता-पिता को बहुत गर्व महसूस हुआ.

अर्बोईस हाई स्कूल में दो साल पढ़ने के बाद, लुई को पेरिस में एक अच्छे बोर्डिंग स्कूल में पढ़ने के लिए भेजा गया. वहां पर उसने एक साल बिताया और कॉलेज में दाखिला लेने की कठिन परीक्षा की तैयारी की.

पेरिस में लुई ज्यादा समय नहीं रहा. वहां उसे घर की बहुत याद सताती थी और वो पेरिस में बीमार भी रहता था. फिर मिस्टर पासचर लुई को घर वापिस लाए. अब लुई दुबारा अर्बोईस हाई स्कूल में पढ़ने के लिए जाने लगा.

1839 में, जब लुई सत्रह साल का हुआ तब उसे लगा कि वो अभी भी कॉलेज में दाखिले की परीक्षा लेने के लिए तैयार नहीं था. इसलिए उसने अर्बोईस से तीस मील दूर, बेसंकोन हाई स्कूल में दाखिला लिया.

यहाँ पर अपनी नियमित स्कूल की पढ़ाई के साथ-साथ वो एक केमिस्ट से विज्ञान पढ़ता था. इस दौरान उसने अपनी कलाकारी भी ज़ारी रखी. वो छोटे बच्चों को पढ़ाता भी था. ट्यूशन से वो जो पैसे कमाता था, उससे उसका स्कूल का पूरा खर्च चल जाता था. बेसंकोन में वो एक मेधावी छात्र था. उसने वहां लैटिन, फिजिक्स और गणित विषयों में स्नातक की डिग्री हासिल की. कला के लिए उसे एक विशेष पुरुस्कार भी मिला.

उसके बाद लुई ने फ्रांस के एक मशहूर टीचर ट्रेनिंग कॉलेज - इकोल नोर्मल की एंट्रेंस परीक्षा में बैठा. उस कॉलेज में, पूरे फ्रांस से केवल 22 छात्र ही उत्तीर्ण हुए. लुई उनमें से एक था.

पर क्योंकि मेरिट में उसका नंबर 15वा था, इसलिए उस साल लुई ने वहां दाखिला नहीं लिया. लुई ने एक साल और जमकर तैयारी की. अगले वर्ष वो परीक्षा में बेहतर करना चाहता था. ऐसा हुआ भी और अगले वर्ष उसका पूरे देश में चौथा स्थान आया. फिर 1843 में, लुई पासचर ने कॉलेज में दाखिला लिया.

जब लुई इकोल में पढ़ रहा था तब उसने सोरबोन्न में जाकर भी कुछ उच्च शिक्षा के कोर्स पढ़े. सोरबोन्न, फ्रांस की सर्वोत्तम यूनिवर्सिटी थी. उसकी सबसे अधिक रूचि फिजिक्स और केमिस्ट्री में थी, और यही विषय वो बाद में पढ़ाना भी चाहता था.

पासचर की क्रिस्टल के ढांचों में विशेष रूचि थी और उसने इस विषय पर अपना ध्यान केन्द्रित किया. 1847 में लुई पासचर को, डॉक्टरेट की डिग्री मिली. पर उससे पहले ही उसने अपनी पहली महत्वपूर्ण वैज्ञानिक खोज की. उसका शोध क्रिस्टल ढांचों के बारे में था. उसके इस शोध की सब तरफ बहुत तारीफ हुई.

स्नातक की डिग्री के बाद पासचर को फ्रांस के एक छोटे शहर के हाई स्कूल में पढ़ाने की नौकरी मिली. पर शायद यह एक अच्छे वैज्ञानिक की प्रतिभा का सही उपयोग नहीं होता. इसलिए फ्रांस के कई नामी-गिरामी केमिस्ट्स ने अपील की, और पासचर को यूनिवर्सिटी ऑफ़ स्ट्रासबर्ग में, केमिस्ट्री के प्रोफेसर की नौकरी मिली. वहां पर पासचर की भेंट मारी लौरेंट से हुई. वो यूनिवर्सिटी के एक अधिकारी की बेटी थीं. 1849 में उनका विवाह हुआ.

स्ट्रासबर्ग में पांच साल गुज़ारने के बाद पासचर और मारी लिल्ले गए. वहां पर 32 वर्षीय वैज्ञानिक - लुई पासचर, केमिस्ट्री के प्रोफेसर और विज्ञान शाखा के डीन बने. लिल्ले में रहकर पासचर ने जो काम किया उसकी वजह से ही वो बाद में पूरी दुनिया में प्रसिद्ध हुए.

एक दिन बिगो नाम का आदमी, पासचर के पास अपनी एक समस्या लेकर आया. उसकी कंपनी चुकंदर की शक्कर से अल्कोहल (शराब) बनाती थी. कभी-कभी खमीर की प्रक्रिया ठीक होती और फर्मेंटेशन अच्छा होता. पर कभी-कभी अल्कोहल खट्टा हो जाता और खराब हो जाता. बिगो ने पासचर से, शराब के खराब होने का कारण पूछा.

पासचर ने चुकंदर की शक्कर के अच्छे और ख़राब फर्मेंटेशन, दोनों नमूनों का, माइक्रोस्कोप के नीचे अध्धयन किया. पासचर को खराब तरल में करोड़ों छड़-आकार के बैक्टीरिया (जीवाणु) दिखाई दिए. अच्छे फर्मेंटेशन वाले तरल में वो छड़-आकार के बैक्टीरिया बिलकुल नदारद थे. बल्कि अच्छे फर्मेंटेशन वाले तरल में खमीर की गोल-गोल कोशिकाएं थीं. अब पासचर को स्पष्ट हुआ – कि उस बैक्टीरिया के कारण ही, अल्कोहल खराब हुआ होगा.
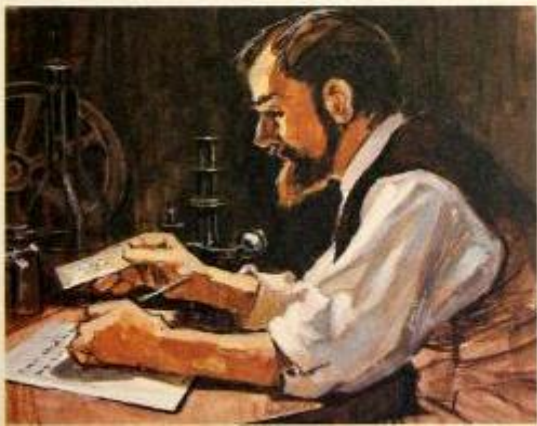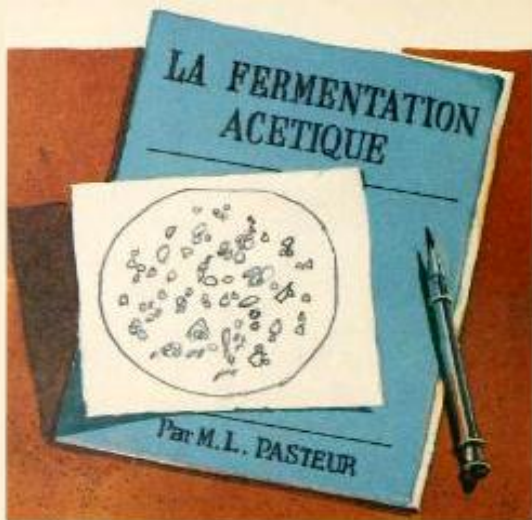
1857 में, दो साल के शोध के बाद पासचर ने *लिल्ले साइंटिफिक सोसाइटी* के सामने एक रिपोर्ट पेश की. इसमें उन्होंने चुकंदर की शक्कर के साथ अपने प्रयोगों का वर्णन किया, और अपने नतीजे भी बतलाए. पर वो अभी भी उस समस्या का कोई हल नहीं खोज पाया था.

पासचर लगातार उसके हल की तलाश करता रहा. अंत में लगातार मेहनत के बाद उसे समस्या का हल मिल ही गया. उसने पाया कि चुकंदर की शक्कर को, एक ख़ास तापमान तक गर्म करने से, उसमें मौजूद सारे नुकसानदेह बैक्टीरिया मर गए.
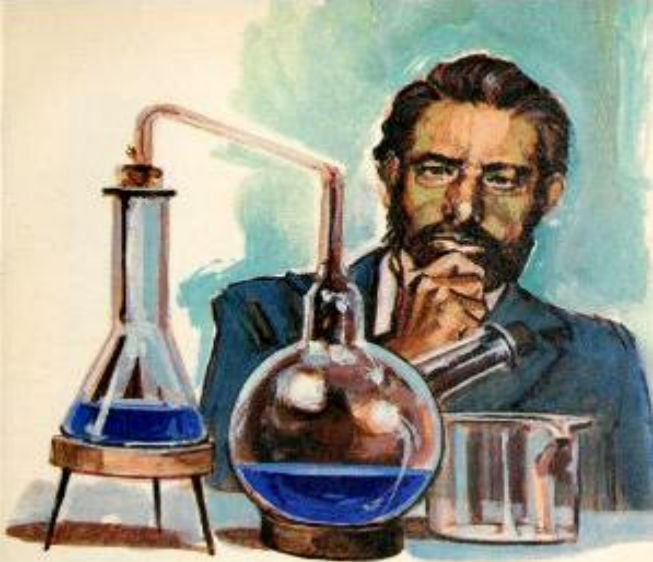
"पैसचुरआईज़ेशन" की यह प्रक्रिया, पूरी दुनिया में कृषि और उद्योगों में बहुत महत्वपूर्ण पाई गई. आज भी *पैसचुरआईज़ेशन* की प्रक्रिया द्वारा दूध, पनीर, अन्य डेरी उत्पादों और कई अन्य भोजनों को नुकसानदेह बैक्टीरिया से मुक्त किया जाता है.

1857 के अंत में पासचर दंपत्ति, पेरिस चले गए. वहां पासचर ने *इकोल नोर्माले* में, डायरेक्टर ऑफ़ साइंटिफिक रिसर्च का पद संभाला. 1888 तक, अपने रिटायरमेंट तक, वे वहीं रहे.

पासचर के पहले शोधकार्य से, फ्रांस के विशाल रेशम उद्योग को, बहुत फायदा हुआ. एक संक्रमण रोग से रेशम के कोए मर रहे थे. इन रेशम के कोयों से ही रेशम का धागा बनता था. पासचर ने खोज करके निकला कि वो बीमारी कुछ जीवाणुओं द्वारा फैलती थी. पासचर ने कहा कि उस रोग से निदान पाने के लिए उन्हें उसके जीवाणुओं को ढोने वाले कैरिअर को ख़त्म करना होगा. लोगों ने पासचर की बात मानी और उससे उन्हें उस संक्रामक रोग को ख़त्म करने में विजय मिली.
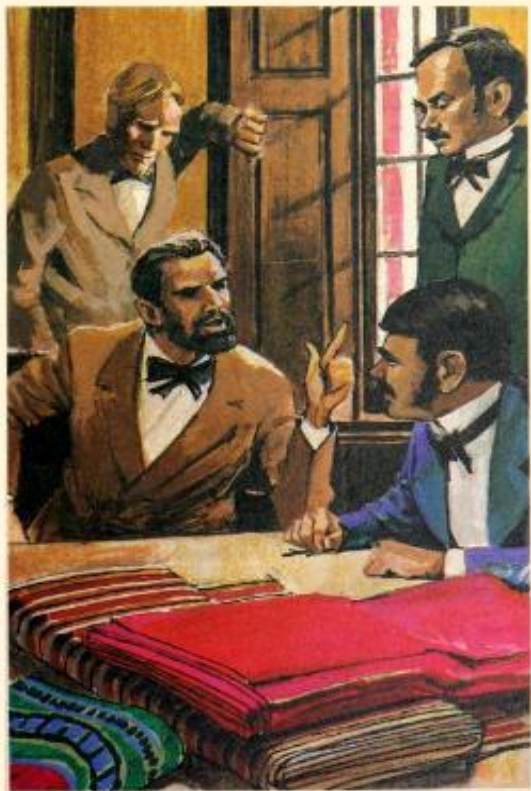
जीवाणु कहाँ से आते हैं? वे कैसे उपजते हैं? इस सच्चाई को लोगों तक पहुँचाने में पासचर को बहुत संघर्ष करना पड़ा. उस समय बहुत से वैज्ञानिकों का मानना था कि जीवाणु खुद यानि स्वतःस्फूर्त पैदा होते थे. पर पासचर का सोच इससे बिल्कुल अलग था. उनके अनुसार सभी जीवित चीज़ें, सिर्फ अन्य जीवित चीज़ों से ही, उत्पन्न होती थीं. इसकी पुष्टि के लिए उन्होंने एक फ्लास्क में कुछ तरल को गर्म किया जिससे उसमें मौज़ूद सभी जीवाणु नष्ट हो गए. उसके बाद उस फ्लास्क की तरल में तब तक अन्य जीवाणु पैदा नहीं हुए जब तक बाहर से उसमें नए जीवाणु नहीं डाले गए.

जीवाणुओं के नियंत्रण में पासचर की विशेष रूचि थी. इस रूचि के कारण ही उन्होंने जानवरों और मनुष्यों में बीमारियाँ क्यों होती हैं, इस विषय पर अपनी तहकीकात शुरू की. उन्होंने खोजकर निकाला कि रोग पैदा करने वाले जीवाणुओं को प्रयोगशाला में कमज़ोर बनाया जा सकता था. और इन कमज़ोर जीवाणुओं से बीमारी रोकने के टीके बनाये जा सकते हैं.

जब किसी स्वस्थ्य जानवर को टीका लगाया जाता है तो उसके शरीर में, रोग प्रतिरोधक ताकत पैदा होती है. उसके बाद अगर जानवर, रोग के शक्तिशाली जीवाणुओं के संपर्क में भी आए तब भी वो उसके हानिकारक प्रभाव से सुरक्षित रहता है.

पासचर ने कमज़ोर जीवाणुओं को जानवरों में इंजेक्ट करने की प्रक्रिया को *वैकसिनेशन* नाम दिया. इसीलिये टीकों को *वैकसीन* के नाम से भी बुलाया जाता है. वैकसिनेशन का पहला सफल प्रयोग 1881 में हुआ. तब पासचर ने वैकसिनेशन का उपयोग एक भयानक बीमारी *एंथ्रेक्स* की रोकथाम के लिए किया

. उससे पहले एंथ्रेक्स से हजारों भेड़े और जानवर मर रहे थे. पासचर का वैकसिनेशन, जानवरों में चिकन-कॉलरा और अन्य रोगों के रोकथाम में भी बहुत सफल रहा.

1882 में पासचर जब साठ साल के हुए तब उन्होंने *रेबीज* (जलातंक) पर अपना शोध शुरू किया. *रेबीज* एक ऐसी बीमारी है जो असुरक्षित मनुष्यों और जानवरों के लिए घातक सिद्ध होती है. दो साल में उन्होंने जानवरों के लिए रेबीज की वैकसीन तैयार की. क्या वो वैकसीन इंसानों पर भी काम करेगी? इसका उत्तर पासचर को अभी तक नहीं पता था.
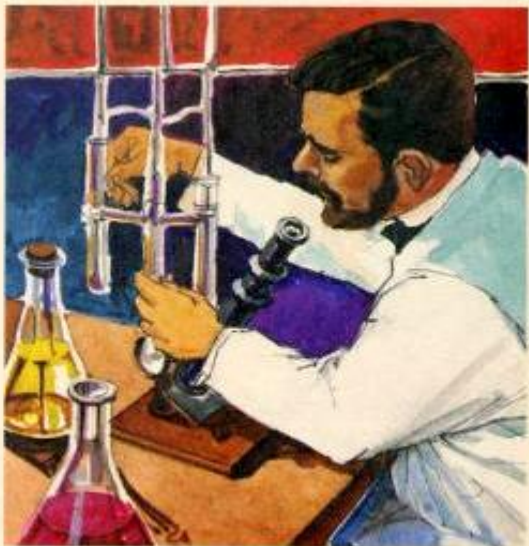
फिर 1885 में, पासचर के पास एक लड़का - जोसफ मीस्तेर लाया गया. उस लड़के को एक रेबीज के रोगी कुत्ते ने काटा था. इसलिए उसकी मृत्यु निश्चित थी. पासचर ने कई हफ़्तों तक उस लड़के के शरीर में रेबीज की वैकसीन इंजेक्ट की. यह इलाज एकदम सफल रहा और वो लड़का एकदम स्वस्थ्य और ठीक हो गया. लुई पासचर ने एक बार फिर अपने वैज्ञानिक शोध और प्रतिभा से एक घातक बीमारी पर काबू पाया था.

1888 में पासचर को कई पक्षाघात आये. उससे वो कमज़ोर पड़ गए और फिर वो इकोल नोर्माले से रिटायर हुए. उसी साल उनके सम्मान में पेरिस में *पासचर इंस्टिट्यूट* की स्थापना हुई. इस इंस्टिट्यूट में बीमारियों के उद्गम, उनके इलाज और रोकथाम पर रिसर्च होती है. तब से दुनिया के कई नामी-गिरामी और प्रसिद्ध वैज्ञानिकों ने पासचर इंस्टिट्यूट में शिक्षा पाई है और वहां शोधकार्य किया है.

पासचर इंस्टिट्यूट, लुई पासचर की याद में एक सच्ची श्रद्धांजलि है. 28 सितम्बर 1895 को, लुई पासचर का देहांत हुआ. उनका पार्थिव शरीर पासचर इंस्टिट्यूट में ही दफनाया गया – उन्हीं प्रयोगशालों के समीप, जिनसे पासचर को अथाह प्रेम था.